साथियों तुम्हें लाल सलाम .....

1 दिसम्बर 1999 को 'आन्ध्र-प्रदेश स्पेशल पुलिस' ने कॉमरेड नल्ला आदि रेड्डी, संतोष रेड्डी, सीलम नरेश एवं अरूण को बंगलोर में सी.पी.आई. (एम.एल.) पीपुल्स वार के एक शेल्टर से गिरफ्तार किया। शारीरिक यातनाएं देने के बाद पुलिस ने इन चारों साथियों को हिरासत में गोली मार दी। शवों को करीमनगर जिले के कोय्यूर जंगलों में फिंकवा कर, पुलिस के डी.जी.पी. ने "आत्मविश्वास, संयम एवं बहादुरी" के साथ मीडिया को "मुठभेड़" की कहानी सुनायी।

भारत के शासक-वर्गों की बहादुरी का आलम यह है कि उनके अफसर, निशस्त्र एवं निहत्थे क्रान्तिकारियों से भी डरते हैं। क्रान्तिकारियों को जान से मार कर ही वे बेखौफ हो पाते हैं। हिरासत में कैदियों का कत्ल करके ही उनके अफसर, अपनी छातियों पर शौर्य के तमगे लटका पाते हैं। भारतीय शासक वर्गों के संयम का आलम यह है कि उनके 'इंटेरोगेशन एक्सपर्ट्स' अपने 'टार्चर-चेम्बरों' में क्रान्तिकारियों से 48 घंटे तक भी जिरह नहीं कर पाते। चन्द घंटों के संघर्ष में ही उनके 'इंटेरोगेशन एक्सपर्ट्स' अपनी पराजय स्वीकार चुके होते हैं और यह निष्कर्ष देने लगते हैं—"इनसे कुछ नहीं उगलवाया जा सकता है।" भारत के शासक वर्गों के आत्मविश्वास की हालत यह है कि वे क्रान्तिकारियों को जेल की सलाखों के पीछे भी रखने को तैयार नहीं हैं। वे इनकी कलम के तीखेपन से घबराते हैं, इनकी जुबान से निकलने वाले सच से घबराते हैं, इनके जीवन से घबराते हैं। इन्हें "मुठभेड़ों" में मार कर ही भारत के शासक अपने वजूद पर भरोसा कर पाते हैं।

भारत के शासक समझते हैं कि साथी नल्ला आदि रेड्डी, संतोष रेड्डी एवं सीलम नरेश की हत्याएं करके उन्होंने आंध्र प्रदेश में वर्ग-संघर्ष की नींव खोखली कर दी है। शासक मुगालते में हैं। नल्ला आदि, संतोष एवं सीलम ने गरीबों-मजलूमों का पक्ष चुना था। कोयला मजदूरों, गरीब किसानों, उत्पीड़ित छात्रों-नौजवानों के संघर्षों को उन्होंने अपनी जिन्दगियां समर्पित कीं। इंसाफ के लिये शमशीर उठाने वाले, ये गरीबों-शोषितों के पहले योद्धा न थे, और न ही आखिरी हैं। इंसाफ के लिये लड़ने वालों की कतारें अनन्त हैं। शहीद साथी अपने वर्ग के साहस, संयम और त्याग को देखकर बड़े फख्र के साथ कह सकते हैं—

"क़त्लगाहों से चुनकर हमारे अलम[1]
और निकलेंगे उश्शाक[2] के काफिले"

1. झंडे 2. हमें चाहने वालों के

सम्पादकीय

भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के सम्मुख मौजूद चुनौतियों पर चन्द बातें

20वीं सदी का अन्त हो रहा है और 21वीं का उदय। 20वीं सदी के अन्त के साथ ही एक पूरी सहस्राब्दि का भी अन्त हो जाएगा। यह सहस्राब्दि सामन्तवाद एवं पूंजीवाद की सहस्राब्दि रही है। समाज व्यवस्थाओं के बतौर इस सहस्राब्दि ने सामन्तवाद का शिखर देखा है और पूंजीवाद का भी। इस सहस्राब्दि ने न केवल सामन्तवाद के चरमोत्कर्ष को देखा है बल्कि यह उसके पतन और विलोप की भी गवाह रही है। इस सहस्राब्दि का इतिहास सामन्तों के खिलाफ मेहनतकशों के अनेक शानदार संघर्षों का साक्षी रहा है। उसने, इन संघर्षों में जहां एक ओर मेहनतकशों को पहले हारते देखा है, वहीं उसने उन्हें फिर ऊर्जा समेट कर पुनः शमशीर उठाते देखा है और अन्ततः उसने सामन्तों को उनके समस्त विशेषाधिकारों व मूल्यों-मान्यताओं के साथ इतिहास के पटल से तिरोहित होते देखा है। यह सहस्राब्दि सामन्तवाद की निर्णायक शिकस्त की सहस्राब्दि रही है।

इस सहस्राब्दि ने पूंजीवाद का उत्थान देखा है और अपनी अन्तिम सदी में उसने पूंजीवाद को पतित होते भी देखा है। परन्तु इस सहस्राब्दि में पूंजीवादी व्यवस्था का विलोप नहीं हुआ। जर्जर और पतनशील होने के बावजूद वह आज भी दुनिया के रंगमंच पर मौजूद है। इस सहस्राब्दि की अन्तिम दो सदियों ने उस राजनीतिक शक्ति को भी पैदा होते और विकसित होते देखा है, जो पूंजीवाद को निर्णायक शिकस्त देगी। अन्तिम दो सदियों में मानव इतिहास के सबसे उन्नत वर्ग—सर्वहारा वर्ग—का एक राजनीतिक शक्ति के बतौर जन्म हुआ और अपने जन्म के साथ ही उसने इतिहास के दरवाजे पर दस्तक देनी शुरू कर दी। और दस्तक भी क्या खूब—पेरिस कम्यून, अक्टूबर क्रान्ति और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति ! मानव इतिहास ने इससे पहले न किसी वर्ग के इतने शौर्यपूर्ण संघर्ष देखे थे, न इतनी विकसित क्षमताओं का संगम, न ही संगठन के इतने उच्च रूप और न ही बराबरी एवं इंसाफ की ओर ऐसे ठोस कदम। एक खूबसूरत धूमकेतु की तरह समाजवाद थोड़ी देर के लिये जगमगाया और फिर गायब हो गया। लेकिन जितनी थोड़ी देर के लिए समाजवाद, एक आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था के बतौर, दुनिया में मौजूद रहा उतने थोड़े से वर्षों की उपलब्धियां इस बात के लिए पर्याप्त हैं कि सर्वहारा वर्ग बड़े आत्मविश्वास के साथ यह दावा कर सके कि, 'नयी सहस्राब्दि मेरी है। नयी सहस्राब्दि में पूंजीवाद की निर्णायक शिकस्त होगी और उसका पूर्ण विलोप होगा। यह, समाजवाद और साम्यवाद की सहस्राब्दि है।'

अपनी राजनीतिक किशोरावस्था में सर्वहारा वर्ग ने जो चौकियां कायम की थीं, उन पर पूंजीपति वर्ग ने पुनः कब्जा कर लिया है। आज दुनिया के सर्वहारा के पास कोई समाजवादी खेमा नहीं है और उसकी तानाशाही के अधीन एक भी देश नहीं है। किशोरावस्था में ही जीत

के बाद मिली हार का सार-संकलन करते हुए, आज दुनिया का सर्वहारा जवान हो रहा है। परिपक्व होता सर्वहारा इस यथार्थ से रू-ब-रू हो रहा है कि इतने विकसित सिद्धान्त और इतने समृद्ध अनुभवों के बावजूद वह नई सदी की शुरूआत सर्वहारा क्रान्तियों के दूसरे संस्करण से नहीं कर पा रहा है। इस का कारण दुश्मन की ताकत नहीं है। साम्राज्यवाद और दुनिया की पूंजीवादी व्यवस्थाएं तो दिन-ब-दिन संकटग्रस्त होती जा रही हैं। साम्राज्यवाद तो ययाति की भांति जीवन-शक्ति के लिये छटपटा रहा है और उसका दुर्भाग्य यह कि उसे कोई पुरु भी नहीं मिल रहा है। समाजवादी क्रान्तियों के दूसरे संस्करणों के साथ नई सदी का स्वागत न कर पाने की विवशता का मूल कारण दुनिया के सर्वहारा की मनोगत शक्तियों की कमजोर एवं बिखरी हुई अवस्था है। आज दुनिया के कम्युनिस्टों के पास कोई शक्तिशाली अन्तर्राष्ट्रीय संगठन नहीं है। ज्यादातर देशों में कम्युनिस्ट आंदोलन किसी एकल पार्टी के झंडे तले संगठित भी नहीं है। अपनी मनोगत शक्तियों की कमजोरियों और बिखराव के कारण आज दुनिया का सर्वहारा, इतिहास को गति देने में समर्थ नहीं हो पा रहा है।

सामने लहूलुहान और कमजोर पड़ता हुआ दुश्मन, परन्तु उसे अन्तिम पटखनियां दे पाने में असमर्थ सर्वहारा वर्ग; यही हमारे दौर की विशेषता और विडम्बना है। इस दौर की विडम्बना व विशेषता, स्वतः दुनिया के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के कार्यभारों को तय कर रही है। इतिहास और अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा, कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों से यह मांग कर रहे हैं कि वे आत्म-संघर्ष कर अपनी कमजोरियों से उबरें और अपनी कतारों के बिखराव का अन्त करें। अपने-अपने देशों में एकल व शक्तिशाली कम्युनिस्ट पार्टियों का गठन व निर्माण आज कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों का केन्द्रीय कार्यभार है। नये कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की स्थापना इसी कार्यभार का विस्तार है, परन्तु एकल व वर्ग-संघर्षों में अनुभव प्राप्त कम्युनिस्ट पार्टियों का अस्तित्व में आना, उसकी स्थापना की पूर्व शर्त भी है। आज, कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों को अपनी समस्त गतिविधियां इसी केन्द्रीय कार्यभार को पूरा करने के लिये संचालित करनी चाहिये।

भारत का क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट आंदोलन भी टूट-बिखराव का शिकार है। 1967 में संशोधनवाद से निर्णायक विच्छेद के बाद हम एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण करने में असफल रहे हैं। 1969 में CPI (ML) के गठन के समय ही भारत के अनेकों कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी CPI (ML) में शामिल नहीं हुए। बाद के वर्षों में CPI (ML) भी अपनी एकता कायम नहीं रख सकी और वह अनेक हिस्सों में विभाजित हुई। जो लोग 1969 में CPI (ML) में शामिल नहीं हुए, उनके संगठनों में भी टूट व बिखराव हुआ। आज देश में कोई अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी नहीं है। हमारे देश के क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट अनेक पूर्व-पार्टी संगठनों में ही लामबन्द हैं। कम्युनिस्ट कतारों, सर्वहारा वर्ग एवं उसके मित्र वर्गों के लिये यह बहुत दुखदायी स्थिति है। दुनिया भर के साम्राज्यवादी एवं भारत के शासक वर्ग इस स्थिति का फायदा उठा रहे हैं और खुद कमजोर व संकटग्रस्त होने के बावजूद, जनता का उत्पीड़न व शोषण दिन-ब-दिन बढ़ा रहे हैं। शक्तिशाली वर्ग-संघर्ष और क्रान्ति ही जनता को इस पीड़ादायी स्थिति से निज़ात दिला सकती है। एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के अभाव में न तो वर्ग-संघर्ष ही सही तरीके से आगे बढ़ पा रहा है और न ही क्रान्ति करीब आ रही है। ऐसी हालत में एक अखिल भारतीय पार्टी का गठन

व निर्माण ही आज भारत के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों का केन्द्रीय कार्यभार है। इस केन्द्रीय कार्यभार को पूरा करने के लिये अपने कंधे प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी सभी कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की है चाहे वे किसी छोटे से पूर्व-पार्टी संगठन में लामबन्द हों, चाहे बड़े में।

इस केन्द्रीय कार्यभार को पूरा कैसे किया जाय? एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के गठन एवं निर्माण के लिये रास्ता कैसे साफ किया जाय?

पिछले तीन दशकों के इतिहास ने यह साबित कर दिया है कि एकता की सद्-इच्छाएं रखने और उनके इजहार करने से एकता की प्रक्रिया आगे बढ़ नहीं पा रही है। हमें एक-दूसरे के करीब आने के लिये ठोस काम करने होंगे। मनोगत सद्-इच्छाओं के अलावा हमें अपने आंदोलन की समस्याओं (एकता में बाधाओं) को हल करने के लिये ठोस कदम उठाने पड़ेंगे।

इन ठोस कामों में सर्वप्रथम है सर्वहारा की विचारधारा, मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा, की हिफाज़त। पिछले तीन दशकों के इतिहास ने साबित किया है कि इस काम को जिस गम्भीरता और शिद्दत से किया जाना चाहिये था, उस गम्भीरता और शिद्दत की हम में काफी कमी रही है। 60 के दशक के उत्तरार्द्ध में भाकपा (मा) के नेतृत्व के संशोधनवाद के खिलाफ जितना तीखा और निर्णायक विचारधारात्मक संघर्ष किया जाना चाहिये था, वह नहीं किया गया। इस कमी के दो महत्वपूर्ण नकारात्मक परिणाम हुए। एक तो भाकपा (मा) का संशोधनवादी नेतृत्व विचारधारात्मक विभ्रम बनाये रखने में सफल रहा और इस तरह से वह अपनी कतारों के एक अच्छे खासे हिस्से को तीन-तिकड़म करके अपने साथ बचाये रखने में कामयाब हुआ। दूसरा यह कि इसी वजह से देश के क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट आंदोलन की वैचारिक बुनियाद बहुत कमजोर रह गयी। इसकी कीमत, टूट-बिखराव के रूप में, हमारा आन्दोलन आज तक चुका रहा है। अगर हमारे आन्दोलन की वैचारिक बुनियाद मजबूत होती तो संगठनों के ढांचे के भीतर संघर्ष करके अधिकांश राजनीतिक-सांगठनिक समस्याएं हल हो सकती थीं और हमें इतने टूट-बिखराव का शिकार न होना पड़ता।

आंदोलन के शुरू के चरण में एक वाम-आतंकवादी लाइन का हावी हो जाना या फिर जन-दिशा को मानने वाले क्रान्तिकारियों द्वारा भी इस गलत लाइन के खिलाफ निर्णायक संघर्ष न कर पाना, जहां एक ओर हमारे क्रान्तिकारी आंदोलन की कमजोर वैचारिक बुनियाद की अभिव्यक्ति है, वहीं दूसरी ओर इस गलती और इन कमजोरियों के आंदोलन में पड़े रहने की वजह से बाद के दिनों में अवसरवाद पनपा। आज हमारे आंदोलन में वाम आतंकवादी लाइन के झण्डाबरदार बहुत थोड़े ही बचे हैं। परन्तु तब भी, आंदोलन के संघटन एवं चरित्र में यह परिवर्तन किसी शुभ विकास का संकेत नहीं है। ऐसा नहीं है कि हाल के वर्षों में हमारे आन्दोलन ने, वाम-आतंकवादी लाइन के खिलाफ निर्णायक संघर्ष चला कर या फिर पूरी निर्ममता के साथ इस गलत लाइन की चीर-फाड़ करके कोई सही अवस्थिति अपनायी है। अगर ऐसा हुआ होता तो भी यह एक सकारात्मक बात होती, ऐसा होने से हमारा वैचारिक स्तर ऊपर उठता और हमारा आन्दोलन मजबूत हुआ होता। इसके बजाय दरअसल हुआ यह है कि वाम आतंकवादी लाइन की व्यवहारिक असफलताओं के उपरान्त, एक के बाद एक संगठन इसका सही एवं समग्र सार-संकलन किये बगैर इसे ठंडे बस्ते में डालते गये हैं और नई अवस्थितियां अपनाते गये हैं। कुल परिणाम यह कि हमारे आंदोलन में वामपंथी आतंकवाद के वैचारिक बीज आज

भी मौजूद हैं और कोई कारण नहीं कि '60 और '70 के दशक की गलतियां भविष्य में, नई परिस्थितियों में, नये रूपों में न दोहरायी जायें। वैसे '60और '70 के दशक के वाम आतंकवाद का सही सार-संकलन न हो पाना, आंदोलन के वर्तमान बिखराव में भी अच्छी-खासी भूमिका अदा कर रहा है।

1976 में माओ-त्से-तुंग की मृत्यु के बाद, हमारे आंदोलन में दक्षिणपंथी रुझानों और भटकावों की अभिव्यक्ति भी तेजी के साथ होने लगी है। शुरू के दिनों में तीन दुनिया के सिद्धांत के हिन्दुस्तानी अनुयायी पैदा हुए और बाद के दिनों में बातें एवं तर्क, संसदीय रास्ते तथा गौर्बाचोव-डेंग को समाजवादी नेताओं के रूप में स्थापित करने तक पहुंचने लगी। आज पेशेवर क्रान्तिकारियों एवं भूमिगत पार्टी की आवश्यकता पर भी अंगुलियां उठने लगी हैं। ऐसी तमाम दक्षिणपंथी बातें 'ठोस परिस्थितियों के ठोस विश्लेषण' या 'व्यवहार में लचीलेपन' या 'रणकोशल एवं दांव-पेंच' के नाम पर की जा रही हैं और इस रुझान के झण्डाबरदारों की गिनती बढ़ती जा रही है। आंदोलन में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा का आधार कितना कमजोर है, इसका अन्दाजा इस उभरते हुए एवं मजबूत होते हुए दक्षिणपंथी रुझान से सहज ही लगाया जा सकता है।

क्रान्तिकारी आंदोलन के भीतर दक्षिणपंथी रुझानों एवं भटकावों का विकास जितना चिन्ताजनक है, उससे कहीं ज्यादा चिन्ताजनक है इस बढ़ते प्रभाव के प्रति शेष आन्दोलन का रवैया। यह रवैया है पर्वत-दुर्ग रवैया। हम अपने संगठन, अपने पर्वत-दुर्ग, की सेहत के प्रति तो चिन्तित रहते हैं और उसमें गलत विचारों के खिलाफ संघर्ष भी करते हैं, परन्तु समग्र आंदोलन के प्रति हमारा दृष्टिकोण ऐसा नहीं है। आंदोलन के किसी दूसरे संगठन में यदि कोई गलत विचारधारात्मक प्रवृत्ति या लाइन उभरने लगती है, तो बहुत सारे 'सही' लोग या तो चुप्पी साधे रहते हैं और तटस्थ पर्यवेक्षक बने रहते हैं या फिर वे अपनी प्रतिक्रिया को विजातीय रुझान को चिन्हित करने एवं उसके संदर्भ में अपनी अवस्थिति स्पष्ट करने तक सीमित रखते है। शेष आंदोलन, विजातीय विचारधारात्मक रुझान के खिलाफ निर्णायक संघर्ष छेड़ कर उसे परास्त करने की जिम्मेदारी नहीं उठाता है। शेष आंदोलन, ऐसा संघर्ष छेड़ना अपनी मूल जिम्मेदारी और अपना केन्द्रीय कार्यभार नहीं मानता है। कुल नतीजा यह निकलता है कि अखिल भारतीय पार्टी के गठन एवं निर्माण की प्रक्रिया आगे बढ़ने के बजाये और पीछे चली जाती है। हमारी पर्वत-दुर्ग मानसिकता की वजह से, हमारी आंखों के सामने पूरे के पूरे संगठन अवसरवाद/संशोधनवाद की गर्त में जा गिरे हैं। अगर हमारी प्रतिक्रिया लेनिनवादियों जैसी होती, अगर हम आंदोलन के भीतर गलत विचारधारात्मक रुझान/भटकाव के खिलाफ आर-पार का संघर्ष छेड़ते तो बहुत हद तक इस तबाही से बचा जा सकता था, इन संगठनों को बचाया जा सकता था। हमें इस पर्वत-दुर्ग मानसिकता से अपना पिंड छुड़ाना चाहिये। हमें अतीत की ढिलाई की आत्मालोचना करनी चाहिये और इस बात को आत्मसात करना चाहिये कि हमें सर्वहारा की विचारधारा की हिफाज़त महज अपने संगठनों के भीतर ही नहीं करनी है बल्कि समग्र आंदोलन एवं समग्र समाज में सर्वहारा की विचारधारा के लिये लड़ना है। अखिल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी बनाने के केन्द्रीय कार्यभार की ओर यह एक ठोस कदम होगा। दरअसल सही बात तो यह है कि समग्र आंदोलन एवं समग्र समाज में सर्वहारा की विचारधारा के लिये संघर्ष

करके ही हम अपने संगठनों को भी विजातीय प्रवृत्तियों का शिकार होने से बचा सकते हैं।

अवसरवाद एवं संशोधनवाद के खिलाफ आर-पार के विचारधारात्मक संघर्षों ने ही महान क्रान्तियों की पूर्व-पीठिका एवं फिज़ा तैयार की है। अगर बोल्शेविकों ने द्वितीय इंटरनेशनल के नेताओं के अवसरवाद के खिलाफ निर्णायक संघर्ष न किया होता, या चीनी कम्युनिस्टों ने ख्रुश्चेव के संशोधनवाद के खिलाफ फैसलाकुन लड़ाई न लड़ी होती तो 20वीं सदी की दो महान क्रान्तियां, अक्टूबर क्रान्ति तथा महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति न हुई होतीं। विचारधारात्मक संघर्षों में ही क्रान्ति की धार पैनी होती है। 21वीं सदी के वर्ग-संघर्षों एवं क्रान्तियों का चरित्र पहले से कहीं ज्यादा सर्वहारा होगा। इन में चेतना एवं मनोगत शक्तियों की भूमिका पहले से कम नहीं, ज्यादा ही होगी। 21वीं सदी के वर्ग-संघर्षों एवं क्रान्तियों को विकसित करने एवं सफल बनाने के लिये सर्वहारा की विचारधारा की शुद्धता एवं पैनापन निहायत जरूरी है। जब तक कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों की कतारों में पूंजीवादी एवं निम्न पूंजीवादी विचारों को लेकर विभ्रम बने रहेंगे, जब तक वैचारिक अस्पष्टता बनी रहेगी तब तक समाजवाद एवं पूंजीवाद, सर्वहारा के हितों और पूंजीपति के हितों के बीच की विभाजक रेखाएं साफ-साफ नहीं खींची जा सकतीं, तब तक कम्युनिस्टों के प्रचार एवं अन्य कार्यवाहियों की धार भोथरी ही बनी रहेगी। वर्ग-संघर्षों को विकसित करने एवं क्रान्तियों को सफल बनाने के लिये हमें अपने आंदोलन में मौजूद गलत विचारों एवं विभ्रमों से निर्ममतापूर्वक संघर्ष करने की जरूरत है। एक-दूसरे के करीब आने, एकता के सूत्रों में बंधने, क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के गठन एवं निर्माण का रास्ता ऐसे ठोस वस्तुगत कामों द्वारा ही तैयार होगा, सद्-इच्छाओं की मौजूदगी जरूरी तो है, परन्तु पर्याप्त नहीं है। हमें क्रान्तिकारियों के बीच की एकता को आगे बढ़ाने के लिये काउत्सकीपंथियों के खिलाफ लेनिन के संघर्षपूर्ण रास्ते एवं ख्रुश्चेवपंथियों के खिलाफ माओ के तरीके को ही अपना तरीका बनाना होगा। हमारा केन्द्रीय कार्यभार ऐसा किये बगैर पूरा नहीं हो सकता है।

किसी क्रान्ति को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने वाली पार्टी न केवल विचारधारात्मक मामलों में विभ्रम-मुक्त एवं दृढ़ होनी चाहिये बल्कि उस पार्टी के पास अतीत के संघर्षों का सही सार-संकलन और वर्तमान परिस्थितियों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन भी होना चाहिये। 1976 में माओ की मृत्यु के बाद चीन में प्रतिक्रान्ति के हावी हो जाने के पश्चात् यह स्पष्ट हो चुका था कि सर्वहारा अपनी जीत और उपलब्धियों को कायम नहीं रख सका है, कि तात्कालिक संदर्भों में सर्वहारा की हार हुई है। यह हार क्यों हुई? इस हार में परिस्थितियों की कितनी भूमिका है ? कम्युनिस्ट पार्टियों और उनके नेताओं की मनोगत गलतियों, कमियों, समझौतों की....कितनी और क्या भूमिका रही है? यह महत्वपूर्ण सवाल खड़ा हो चुका है। इस सवाल का सही उत्तर खोजे बगैर न तो भारतीय क्रांति सफल हो सकती है और न ही 21वीं सदी की अन्य क्रान्तियां। हमारी राय है कि मामला केवल रूसी क्रान्ति या चीनी क्रान्ति की हार के कारणों को खोज निकालने और समझ लेने तक सीमित नहीं है। पूरी 20वीं सदी के वर्ग-संघर्षों का समग्रता में सार-संकलन करने की जरूरत है (इसमें इंडोनेशियाई क्रान्ति भी आती है, भारतीय क्रान्ति भी आती है और दुनिया की शेष सभी पूर्ण-अपूर्ण क्रान्तियां आती हैं)। समग्रता में सार-संकलन का काम, एक बहुत ही गम्भीर एवं महत्वपूर्ण काम है। इस जिम्मेदारी को पूरा करने का सही तरीका क्या हो सकता है ?

सही सार-संकलन तभी हो सकता है जब सार-संकलन करने वालों के पास इस काम के लिये उचित क्षमताएं तथा पर्याप्त जानकारियां हों।

इस तरह का सार-संकलन करने वालों में इतिहास की गतियों एवं उपगतियों की एक गहरी समझ होनी चाहिये, इतिहास के विभिन्न दौरों एवं परिस्थितियों की सीमाओं का बोध होना चाहिये, वर्ग-संघर्ष के नियमों, उनके उतार-चढ़ाव, पेचीदगियों, बारीकियों.....का एहसास होना चाहिये। ये क्षमताएं उन्हीं लोगों में पायीं जा सकती हैं जिन के पास मार्क्सवाद की गहरी सैद्धान्तिक समझ के साथ-साथ वर्ग-संघर्षों को विकसित एवं संचालित करने के व्यापक अनुभव हों। सुस्पष्ट है कि ऐसी क्षमताओं वाले लोग वर्ग-संघर्षों में तपी हुई पार्टियों में ही पाये जा सकते हैं। जिन लोगों में वर्ग-संघर्षों को विकसित तथा संचालित करने की क्षमताएं तो बहुत दूर, अपने छोटे-छोटे पूर्व-पार्टी संगठनों को विकसित करने की क्षमताओं का ही अभाव हो, वे तो किसी भी स्थिति में महान क्रान्तियों एवं अन्तर्राष्ट्रीय वर्ग-संघर्षों का सही सार-संकलन नहीं कर सकते हैं। ऐसे अपरिपक्व लोग एकांगी एवं मनोगत नतीजे निकालने से बच नहीं सकते हैं।

वैसे, आज की टूट-बिखराव की स्थिति में दस्तावेजों एवं तथ्यों का जितना अभाव है, उसमें कोई समग्र एवं सही तस्वीर उभर भी नहीं सकती है। अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन के तमाम महत्वपूर्ण दस्तावेज एवं साक्ष्य भारत के मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन के पास उपलब्ध नहीं हैं। ऐसी हालत में अगर हमारे पास उचित समझदारी एवं अनुभव वाले लोग होते भी, तब भी यह काम केवल पर्याप्त तथ्यों एवं साक्ष्यों के अभाव में आज नहीं किया जा सकता था।

ऐसी स्थिति में उक्त जिम्मेदारी को पूरा करने के लिये क्या किया जाये ?

ऐसी स्थिति में उक्त जिम्मेदारी को पूरा करने की पूर्व शर्तें पूरी की जायें। यह माना जाय कि इस काम को सही तरीके से तो विश्व सर्वहारा का कोई अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र ही पूरा कर सकता है। यह माना जाय कि आंशिक एवं अंतरिम तौर पर भी यह जिम्मेदारी एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी ही पूरी कर सकती है। अतः पूर्व-पार्टी संगठन एवं उनके नेता इस वृहद काम का बीड़ा उठाने तथा बचकाने, एकांगी एवं मनोगत निष्कर्षों पर पहुंचने के बजाए अपने हिन्दुस्तानी आन्दोलन एवं अपने अतीत का सही सार-संकलन करने की कोशिश करें। अगर वे ऐसा करते हैं तो अखिल भारतीय पार्टी बनाने में महती मदद मिलेगी। और पार्टी बनाने के बाद, भारत में वर्ग-संघर्ष विकसित करते हुए वे अन्तर्राष्ट्रीय वर्ग-संघर्ष के सार-संकलन का बीड़ा उठायें।

जब तक एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी कोई नया सार-संकलन प्रस्तुत नहीं करती तब तक हम सभी चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की 10वीं कांग्रेस (अगस्त 1973) तक के सर्वमान्य सार-संकलन को समझने एवं आत्मसात करने का प्रयास करें। यही रुख विज्ञान सम्मत भी है और हमारे आंदोलन की एकता के हित में भी है। इस बात को रेखांकित कर देना इसलिये जरूरी है क्योंकि पिछले दो दशकों से हमारे आंदोलन के कुछ लोग दो-चार नये तथ्यों एवं दस्तावेजों के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय वर्ग-संघर्ष के बारे में पुराने स्थापित सार-संकलन को उलट कर अपनी मौलिकता प्रदर्शित करने की कोशिशें करते रहे है। विगत दिनों में उन्हें नये अनुयायी मिले हैं। अगर इस अवैज्ञानिक प्रवृत्ति के खिलाफ संघर्ष नहीं किया गया और आंदोलन में इसके एकांगी निष्कर्षों को स्थापित होने दिया गया तो आंदोलन में विभ्रम और

बढ़ेंगे तथा आंदोलन की एकता और अधिक कमजोर होगी।

अर्थात् यह कि सही सार-संकलन के स्थान पर उथली, अवैज्ञानिक अटकलबाजी एवं नुक्ताचीनी से बचा जाये। पुराने स्वीकृत सार-संकलन को ही आधार मान कर अखिल भारतीय पार्टी के गठन का काम किया जाये, चाहे मुद्दा 1921 की क्रोन्स्तात घटना हो, लेनिन की वसीयत से जुड़ा प्रसंग हो, समूचे स्तालिन काल का मूल्यांकन हो या 1937-38 की विशिष्ट घटनाएं हो, समाजवादी खेमे में युगोस्लाविया की वापसी का मामला हो, कोरियाई समझौते का मामला हो, 1957 एवं 1960 के घोषणापत्र एवं वक्तव्य के मामले हों, लिन-पियाओं के वारिस घोषित किये जाने का मामला हो या कोई अन्य पेचीदा प्रसंग। हमारा स्पष्ट मत है कि 20वीं सदी के वर्ग-संघर्षों और विश्व-व्यापी विपर्यय का सार-संकलन करना निहायत जरूरी है, परन्तु नीम-हकीमी करने के बजाय इनका वैज्ञानिक सार-संकलन किया जाये। पूर्व-पार्टी संगठन स्वयं ऐसी नीम-हकीमी करने के बजाये इस दिशा में सही कदम उठायें, अखिल भारतीय पार्टी के गठन के लिये संघर्ष करें, ताकि यह काम भी मुकम्मल तरीके से हो सके।

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय परिस्थितियों के सही मूल्यांकन पर ही किसी क्रान्तिकारी वर्ग की रणनीति एवं रणकौशल निर्भर करती हैं। वर्तमान परिस्थितियों के सही मूल्यांकन के बिना न तो वर्ग-संघर्ष विकसित किया जा सकता है और न ही क्रान्ति सम्पन्न की जा सकती है। अखिल भारतीय पार्टी के गठन के लिये यह निहायत जरूरी है कि वर्तमान परिस्थितियों के मूल्यांकन पर मतभेद हल किये जायें और आंदोलन एक आम सहमति तक पहुंचे। इसमें कोई दो राय नहीं कि वर्तमान परिस्थितियों के बारे में आंदोलन में अनेक मूल्यांकन मौजूद हैं और इस कारण कई रणनीतिक कार्यक्रम एवं रणकौशलात्मक लाइनें मौजूद हैं और मतभेदों की ऐसी स्थिति एकता में बड़ी बाधा है। परन्तु इसमें भी कोई दो राय नहीं कि ये मतभेद सुलझाये जा सकते हैं। ये मतभेद इसलिये सुलझाये जा सकते है क्योंकि हमारे पास सही मूल्यांकन तक पहुंचने के लिये मार्क्सवाद की वैज्ञानिक विश्लेषण पद्धति मौजूद है। हम सभी अच्छी तरह जानते हैं कि आंदोलन में मौजूद हर मूल्यांकन सही नहीं हो सकता है। सही तो एक ही मूल्यांकन होगा, शेष सभी गलत होंगे। यह अलग बात है कि आज आन्दोलन में मौजूद कोई भी मूल्यांकन पूर्णतः सही न हो। लेकिन तब भी मार्क्सवाद की वैज्ञानिक पद्धति का इस्तेमाल करके एक ही सही मूल्यांकन तक पहुंचा जा सकता है।

आंदोलन में मतभेद बने रहने का एक बड़ा कारण यह है कि हम में से ढेर सारे लोग विचारधारा एवं इसके आधार पर परिस्थितियों के आंकलन में अन्तर नहीं करते हैं। वे माओ या स्तालिन द्वारा किसी विशेष परिस्थिति के मूल्यांकन को भी विचारधारा का अंग मान कर उस प्रस्थापना को अपरिवर्तनीय मानते हैं। यह एक गलत अवस्थिति है और परिस्थितियों के बदल जाने पर भी हमें पुराने सही परन्तु आज अप्रासंगिक एवं गलत नतीजों से चिपकाये रखती है। उदाहरण के लिये 1963 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की आम दिशा परिभाषित की थी। ढेर सारे लोग इसके सभी 25 बिन्दुओं को माओ विचारधारा का अंग मानते हैं। यह अवस्थिति ठीक नहीं है। इन 25 बिन्दुओं में से अनेक बिन्दुओं में सर्वहारा की विचारधारा से संबंधित बातें है और इन पर किसी भी प्रकार के पुनर्विचार या संशोधन की जरूरत नहीं है; वर्ग-समाज के पूरे ऐतिहासिक दौर के लिये वे बातें सही हैं। परन्तु उनमें से

अनेक बिन्दु ऐसे भी हैं जिनमें विचारधारा से संबंधित बातें नहीं हैं, बल्कि उनमें 1963 की अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का मूल्यांकन किया गया है। मसलन ऐसी बातें कि पूंजीवादी देशों में जनवाद दरअसल बुर्जुआ वर्ग की तानाशाही होती है, या समाजवाद सर्वहारा की तानाशाही में ही कायम हो सकता है, या यह कि साम्राज्यवाद के युग में पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण शान्तिपूर्ण नहीं हो सकता है....विचारधारात्मक बातें हैं। लेकिन यह बात कि दुनिया में चार बुनियादी अन्तर्विरोध हैं और साम्राज्यवादी खेमे एवं समाजवादी खेमे के बीच का अन्तर्विरोध एक बुनियादी अन्तर्विरोध है तथा वह विश्व इतिहास को गति दे रहा है.....1963 की परिस्थितियों का सही मूल्यांकन थी। परन्तु यह कोई विचारधारात्मक बात नहीं है, आज सन् 2000 के लिये इस बात को दोहराना सर्वथा गलत है। आज समाजवादी खेमा समाप्त हो चुका है, दुनिया में सर्वहारा की तानाशाही के अधीन समाज व्यवस्थाएं समाप्त हो चुकी हैं, और यह अन्तर्विरोध न तो मौजूद है और न ही इतिहास को गति दे रहा है। आज की दुनिया में एक समाजवादी आन्दोलन तो है और सर्वहारा व पूंजीपति के बीच का अन्तर्विरोध भी मौजूद है, लेकिन समाजवादी खेमा नहीं है। स्पष्ट है कि सन् 2000 की वैश्विक परिस्थिति में 1963 की तरह चार बुनियादी अन्तर्विरोध सक्रिय नहीं हैं। इसलिये हमें आज 1963 की आम दिशा के विचारधारात्मक पक्ष पर तो डटे रहने की जरूरत है परन्तु 1963 की आम दिशा के मूल्यांकन पक्ष से जड़सूत्रवादियों की तरह चिपके रह कर हम आज आगे नहीं बढ़ सकते हैं। हमें सन् 2000 की वैश्विक परिस्थिति का नये सिरे से मूल्यांकन करने और तदनुरूप अपने कार्यभार तय करने की जरूरत है।

ऐसे ही साम्राज्यवाद की शुरू की मंजिलों में, अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन ने पाया कि औपनिवेशिक एवं अर्द्ध-औपनिवेशिक देशों में, इन देशों का सामन्ती वर्ग वहां साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब (social prop) है। स्तालिन और माओ ने ऐसी ही स्थिति का सामना किया था। इसलिये उस वक्त उन्होंने सामन्ती वर्ग को इन देशों की क्रान्तियों का मुख्य दुश्मन बताया था। परन्तु यह सूत्रीकरण, मार्क्सवाद का कोई बुनियादी विचारधारात्मक प्रमेय नहीं है, यह एक दौर के सामाजिक रिश्तों का मूल्यांकन है। अगर समय एवं परिस्थितियों के बदलने के साथ, सामन्तवाद की जगह उत्पीड़ित देशों का कोई अन्य शोषणकारी वर्ग, साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब बन जाये तो मार्क्सवादियों का काम बनता है कि वे बदली हुई परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण करें, नये दुश्मन को चिन्हित करें और नये कार्यभार तय करें। आज सन् 2000 में वैश्विक परिस्थितियां वाकई इतनी बदल गयी हैं कि साम्राज्यवाद के काम करने के तरीकों में अच्छा खासा अन्तर आया है और तीसरी दुनिया के देशों में सामन्ती वर्ग उसका प्रमुख सामाजिक अवलम्ब नहीं रह गया है। हमें नई परिस्थितियों एवं नये दुश्मन का ठीक से जायजा लेने की जरूरत है, ताकि बदली हुई दुनिया के हिसाब से हम सही ढंग से काम कर सकें। हमें पुराने मूल्यांकन एवं पुराने सूत्र ('सामन्तवाद साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब हैं') को बदलने की जरूरत है। साम्राज्यवाद, पूंजीवाद की उच्चतम मंजिल है। साम्राज्यवाद की कार्यप्रणाली में इस बात की पूरी-पूरी सम्भावना है कि मानव इतिहास का एक नया शोषणकारी वर्ग (पूंजीपति वर्ग) पुराने शोषणकारी वर्ग (सामन्ती वर्ग) की जगह साम्राज्यवाद का सामाजिक अवलम्ब बन जाये। अगर वैश्विक परिस्थिति इसकी इजाज़त दे तो साम्राज्यवाद अपने विकास एवं अपने स्थायित्व के लिये भी ऐसा परिवर्तन चाहेगा। अगर स्तालिन और माओ 21वीं सदी

की क्रान्तियों को संगठित करने का प्रयास कर रहे होते तो वे पुराने सूत्रीकरण से चिपके रहने के बजाये नई परिस्थिति एवं नये दुश्मन का मूल्यांकन करते एवं नये कार्यभार तय करते।

हमारे आन्दोलन में न केवल एक दौर के मूल्यांकनों को विचारधारा का हिस्सा मानने की गलत प्रवृत्ति मौजूद है बल्कि अनेक गैर-मार्क्सवादी धारणाएं भी मौजूद हैं। इनमें से एक यह है कि पूंजीवाद बिना पूंजीवादी क्रान्तियों के नहीं आ सकता है। ऐसे साथी आम तौर पर पूंजीवाद के शोषणकारी चरित्र पर कम गौर करते हैं और वे इसे जरूरत से ज्यादा उदात् एवं जरूरत से ज्यादा प्रगतिशील मानते हैं। हमें ऐसी गलत धारणाओं को ठीक करने की जरूरत है। हमें इस बात को स्थापित करने की जरूरत है कि एक शोषणकारी व्यवस्था की जगह दूसरी शोषणकारी व्यवस्था बिना क्रान्ति के आ सकती है। केवल एक शोषणकारी व्यवस्था (दास प्रथा, सामन्तवाद या पूंजीवाद) की जगह कोई गैर-शोषणकारी व्यवस्था (समाजवाद) बिना क्रान्ति के स्थापित नहीं हो सकती है। पूंजीवाद की क्लासकीय भूमि यूरोप में ही हर जगह पूंजीवाद क्रान्तियों के द्वारा स्थापित नहीं हुआ। अनेक जगह पूंजीवाद ने गैर-क्रान्तिकारी संक्रमण द्वारा सामन्तवाद की जगह ली है। इस गैर-क्रान्तिकारी संक्रमण की परिघटना को मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन सभी ने चिन्हित किया था। जो गैर-क्रान्तिकारी संक्रमण यूरोप में हो सकता था या जापान में हो सकता था, अनुकूल परिस्थितियां मिलने पर वह तीसरी दुनिया में भी सम्भव है।

ऐसे ही पूंजीवाद को लेकर अन्य गलतफहमियां भी आन्दोलन में मौजूद हैं। आन्दोलन में यह यांत्रिक समझ मौजूद है कि सामन्ती अधिरचना के तमाम अंग मसलन जाति, धर्म, अंधविश्वास, पितृसत्तात्मक मूल्य-मान्यताएं.....पूंजीवाद के साथ बेमेल हैं। साथियों का मानना है कि अगर किसी देश में अंधविश्वास, धर्म, जाति, पितृसत्तात्मक मूल्य-मान्यताएं.....मौजूद हों तो पूंजीवाद उस समाज की मुख्य चालक शक्ति नहीं बन सकता है। ऐसे साथी अधिरचना के इन हिस्सों एवं संस्थाओं को पूंजीवाद से ज्यादा ताकतवर उपादान मानते हैं। परन्तु सच्चाई, साथियों की इस स्थापना से ठीक उलटी है। कम्युनिस्ट घोषणापत्र से लेकर पूंजी तक मार्क्स ने यही स्थापित किया है कि पूंजीवाद हर प्राक्-पूंजीवादी संस्था को अपने अधीन करने एवं अपने हित में उपयोग करने की क्षमता रखता है। इसलिये किसी देश-समाज का मूल्यांकन करते समय इतना ही पर्याप्त नहीं है कि कम्युनिस्ट उस देश-समाज में प्राक्-पूंजीवादी रूपों की मौजूदगी को देखें और पुराने निष्कर्ष, अर्द्ध-सामन्तवाद से चिपके रहें। कम्युनिस्टों के लिये यह भी जरूरी है कि वे मामले की गहराई में जायें और गौर से देखें कि उक्त प्राक्-पूंजीवादी रूप सामन्ती मूलाधार को पुख्ता कर रहा है या यह पश्चिमी यूरोप एवं जापान की राजशाहियों की तरह पूंजीवाद की सेवा कर रहा है। इस बात की अच्छी-खासी सम्भावना होती है कि जापानी समाज में नारी विरोधी पितृसत्तात्मक मूल्य-मान्यताओं अथवा आयरिश समाज में ईसाइयत की तरह तीसरी दुनिया में मौजूद पुराने प्राक्-पूंजीवादी रूप हर जगह दिखाई दें और वे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप को प्रभावित भी करते हों, लेकिन इसके बावजूद वहां पूंजीवाद हो। ऐसे समाज सामन्ती, अर्द्ध-सामन्ती न हो कर पूंजीवादी समाज हों और वहां की क्रान्तियों के कार्यभार पूंजीवाद की स्थापना की जगह सीधे-सीधे समाजवाद की स्थापना हो।

भारत के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी आन्दोलन में वर्तमान राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों का सही-सही मूल्यांकन किया जाये, यह देश में पार्टी बनाने की बुनियादी शर्त है। पार्टी के पास

परिस्थितियों के सही मूल्यांकन पर आधारित एक सुगठित रणनीतिक एवं रणकौशलात्मक लाइन होनी अनिवार्य है। मूल्यांकन करने एवं लाइन को विकसित करने का काम सही से किया जा सके, यह हमारी इच्छा और प्रयास है। इसमें प्रयुक्त होने वाली विश्लेषण पद्धति के बारे में आंदोलन के साथियों की कुछ सामान्य गलतियों अथवा गलतफहमियों को हमने ऊपर चिन्हित किया है। हम आशा करते हैं कि साथी, पद्धति संबंधी गलतियों पर गम्भीरता से विचार करेंगे और इन्हें ठीक कर सही नतीजों तक पहुंचने के लिये संघर्ष करेंगे।

एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के गठन एवं निर्माण के लिये हम यह भी जरूरी समझते हैं कि पूर्व-पार्टी संगठनों के काम एवं उनके आधार सर्वहारा वर्ग में हो। पूर्व-पार्टी संगठनों की जड़ें किसानों या अन्य मेहनतकशों में हो, इतना ही पर्याप्त नहीं है। किसी सही सर्वहारा पार्टी के गठन की यह पूर्व शर्त है कि उसके घटक संगठनों का सर्वहारा वर्ग में आधार हो। यह न केवल भावी पार्टी के घटक हिस्सों में समरूपता लाने के लिये जरूरी है, बल्कि इससे कहीं ज्यादा यह पूर्व-पार्टी संगठनों के स्वस्थ और सही विकास के लिये भी जरूरी है। यहां हम यह स्पष्ट कर देना भी जरूरी समझते हैं कि हमारे संगठन, भारत की कम्युनिस्ट लीग (माले) का काम इस मायने में काफी कमजोर रहा है। विगत वर्षों में इस कमजोरी की अच्छी-खासी कीमत हमारे संगठन ने टूट-बिखराव एवं विचलन के रूप में चुकायी है। इस कमी को दुरुस्त करने, अपने संगठन के काम एवं आधार को सर्वहारा वर्ग के बीच स्थापित करने की कोशिशें हम कर रहे हैं। अपनी और आंदोलन के अन्य पूर्व-पार्टी संगठनों की कमियां-कमजोरियां, हम सभी को बहुत तीखेपन के साथ इस बात का एहसास करा रही है कि हमारी जड़े सर्वहारा वर्ग के बीच होनी चाहिये। सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी बनाने की यह पूर्व शर्त है।

विगत दिनों में हमारे आंदोलन में, सर्वहारा के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र की प्रासंगिकता एवं जरूरत का सवाल, वाद-विवादों का एक अहम मुद्दा रहा है। कुछ-एक संगठन तो ऐसे केन्द्र को अप्रासंगिक एवं गैर-जरूरी मानने की हद तक पहुंच गये हैं। इस प्रवृत्ति को हम निहायत खतरनाक मानते हैं। यह प्रवृत्ति सर्वहारा वर्ग के बुनियादी नारे, "दुनिया के मजदूरों एक हो" के खिलाफ है। यह सर्वहारा की एकता को भंग करती है। आज के टूट-बिखराव एवं विचारधारात्मक विचलन की स्थिति में तो सर्वहारा के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र का अभाव दुनिया के कम्युनिस्टों को और भी तीखेपन के साथ खल रहा है। परन्तु इस अहसास के बावजूद, हम, अपरिपक्व एवं अनुभवहीन पूर्व-पार्टी संगठनों द्वारा किसी इंटरनेशनल के गठन के पक्षधर नहीं है। हमारा मानना है कि सर्वहारा के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र का गठन परिपक्व एवं अनुभवी पार्टियों के द्वारा ही होना चाहिये। अपरिपक्व और अनुभवहीन संगठनों के द्वारा बनाया जाने वाला इंटरनेशनल दुनिया के कम्युनिस्ट आंदोलन का मार्ग-दर्शन करने एवं उसे आगे बढ़ाने में अक्षम साबित होगा। इसलिये हमारा मानना है कि इंटरनेशनल प्रासंगिक एवं जरूरी है और इसे स्थापित करने की दिशा में बढ़ने के लिये भारत में पार्टी बनाना एवं वर्ग संघर्षों में अनुभव प्राप्त करना निहायत जरूरी है। परन्तु हमारी इस प्रस्थापना का मतलब यह कदापि नहीं है कि वर्तमान टूट-बिखराव एवं अपरिपक्वता की स्थिति में दुनिया के कम्युनिस्ट या पूर्व-पार्टी संगठन आपस में मिलने-जुलने, जानकारियों एवं अनुभवों के आदान-प्रदान के लिये कोई मंच न कायम करें।

ऐसे मंचों की सार्थकता है, इन्हें स्थापित किया जाना चाहिये, लेकिन इन्हें स्थापित करते समय यह बात साफ रहनी चाहिये कि ये घटक-संगठनों का मार्ग-दर्शन नहीं करेंगे और न ही निर्देश देंगे। हमारी इस प्रस्थापना में अन्तर्निहित है कि ऐसे मंच जनवादी-केन्द्रियता के सिद्धांत पर काम नहीं करेंगे।

20वीं सदी के अन्तिम दशक में, भारत के क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट आन्दोलन में, जहां एक ओर संगठनों के टूटने-बिखरने की दुखदायी प्रक्रिया थमी नहीं, वहीं दूसरी ओर देश के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों ने आपस में एकताएं स्थापित करने की कोशिशें भी की है। कई जगह इन कोशिशों के सार्थक परिणाम निकले हैं। समाज के शोषित एवं उत्पीड़ित लोगों तथा देश के क्रान्तिकारी आंदोलन के लिये यह खुशी की बात है। हम इस सकारात्मक विकास का स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि आने वाले दिनों में राजनीतिक एवं सांगठनिक एकता स्थापित करने के लिये देश के कम्युनिस्ट आपस में संघर्ष करेंगे और इस सकारात्मक प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलेगा।

हम शुरू में ही कह चुके हैं कि एकता की सद्-इच्छाएं रखना और उनका इजहार करना, एकता के रास्ते में मौजूद बाधाओं को लांघने के लिये पर्याप्त नहीं है। हमारा स्पष्ट मत है कि ये बाधाएं न तो खुद-ब-खुद समाप्त हो जायेंगी और न ही 'समय' इनके समाधान पेश कर देगा। इन के समाधान के लिये देश के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों को ठोस व्यावहारिक कार्यवाहियां करनी पड़ेगी। देश के कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी आन्दोलन के मतभेद एवं समस्याएं ठीक से समझी जा सकें और उनके समाधान खोजने हेतु सार्थक प्रयास करने के लिये एक मंच (Platform) की जरूरत है, जिस पर कम्युनिस्ट क्रान्तिकारी समय-समय पर इकट्ठे हो कर ऐसे प्रयास करें। ऐसे मंच के अभाव में कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के बीच आपसी संवाद बहुत सीमित है। हम ऐसी किसी भी पहल में अपनी क्षमता भर योगदान के लिए संकल्पबद्ध हैं।

हमारी निगाह में ऐसे मंच के गठन की दो ही शर्तें होनी चाहिये। पहली शर्त यह कि संगठन, मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा में विश्वास रखता हो। दूसरी शर्त यह कि उक्त संगठन का नेतृत्वकारी निकाय पेशेवर क्रान्तिकारियों की कोई कमेटी हो और मंच में संगठन की ओर से हिस्सेदारी करने वाले नुमाइंदे उस कमेटी के अनुशासन में हों।

हमें उम्मीद है कि अगर इस अथवा इससे मिलते-जुलते अन्य प्रस्तावों पर अमल किया जाता है, कम्युनिस्ट क्रान्तिकारियों के बीच आन्दोलन एवं संगठनों की समस्याओं पर खुल कर आदान-प्रदान होता है तो एकता के रास्ते में मौजूद मतभेदों एवं बाधाओं को सुलझाने के रास्ते खुलेंगे। हमें पूरी उम्मीद है कि ठोस कदम उठाने पर ठोस सकारात्मक नतीजे निकलेंगे। हमें पूरी उम्मीद है कि ऐसे कदम उठाते हुए हम देश में एक क्रान्तिकारी कम्युनिस्ट पार्टी के गठन एवं निर्माण की ओर बढ़ेंगे, तथा 21वीं सदी को समाजवाद की सदी बनाने में अपना योगदान देंगे।

- **मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा जिन्दाबाद**
- **महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति जिन्दाबाद**
- **सर्वहारा का अन्तर्राष्ट्रीयतावाद जिन्दाबाद**